© 2017 IJSRSET | Volume 3, Issue 5, July-August-2017
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 753-756

विश्व–शान्ति के लिए धर्म की भूमिका

मंजू सरोज
शोध छात्रा
दर्शनशास्त्र विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

मानव को पूर्णत्व प्रदान करने की दृष्टि से जिन संस्कारों को भारतीय मनीषा ने सर्वाधिक महत्व प्रदान किया है वह महर्षि जैमिनी द्वारा लिखी गई पूर्वमीमांसा का प्रथम सूत्र है, ''अथातो धर्म जिज्ञासा'' अर्थात मानव की यह प्रथम जिज्ञासा है कि क्या है धर्म? और क्या है अधर्म?

धर्म की वर्तमान समय तक भी कोई सर्वमान्य व सीधी परिभाषा उपलब्ध नहीं है जो सभी को सन्तुष्ट कर सके। क्योंकि इसका सम्बन्ध व्यक्ति के अर्न्तमन से तो है ही साथ ही देश, काल एवं परिस्थितियों आदि का भी इस पर पूरा प्रभाव होता है। धर्म व्यक्ति के जीवन का सारतत्व है जिससे लौकिक जीवन में संसार का अभ्युदय हो, सभी का कल्याण हो तथा सभी का उत्कर्ष हो सके वही 'धर्म' माना गया है। उसी को सच्चे अर्थों में हम 'धर्म' स्वीकार कर सकते हैं साथ ही साथ वह भी धर्म है जिससे निःश्रेयस की प्राप्ति हो सके। अभ्युदय जहाँ एक ओर लौकिक जगत का कल्याण करता है वहीं दूसरी ओर सृजन व विस्तार का भी प्रतीक है तथा आध्यात्मिक कल्याण एवं चेतना के पूर्णत्व का वाहक है।

धर्म एक व्यापक शब्द है जिसको कोई भी संकीर्ण मानसिकता के साथ नहीं समझ सकता है। मानव जीवन का सुपथ धर्म के मार्ग पर ही चल के पार किया जा सकता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जिसका जीवन समाज के सामाजिक, नैतिक व धार्मिक मूल्यों के अनुसार व्यतीत होता है परन्तु यह आवश्यक नहीं कि पृथ्वी पर विद्यमान समस्त मानवजाति के सामाजिक, नैतिक व धार्मिक मूल्य एक जैसे ही हो, परन्तु मानव–धर्म तो एक जैसा ही होता है बस उसकी परिभाषाओं में अन्तर हो सकता है।

© 2017 IJSRSET | Volume 3, Issue 5, July-August-2017
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 753-756

''सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग्यवेत्''

अर्थात् सर्वसुख सर्वकल्याण की कामना हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहने या दिवास्वप्न देखते रहने अथवा मात्र कल्पनाओं से पूरी नहीं होगी। भारतीय मनीषियों ने इसीलिए बार–बार कर्म करो पर विशेष (बल) महत्व दिया है। भारत में श्रुतियों, उपनिषदों में कर्म की ही विशेष वन्दना की गई है। भारतीय मनीषियों ने कहा है कि जीवन का वास्तविक सत्य हमारे समक्ष उपलब्ध है परन्तु हम अज्ञान के कारण स्वयं की अकर्मण्यता के कारण, तमस के प्रभाववश से प्राप्त नहीं कर सकते।

जो हमारे एवं ज्ञान के बीच में दीवार का कार्य करते हैं जो हमें परमसत् से दूर रखता है। जो अज्ञान के मूल तत्व हैं वे इस प्रकार हैं– अविद्या, अहंकार, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि। हमें पुरूषार्थ के माध्यम से इन विकारों को हटाना होगा उन पर विजय प्राप्त करना होगा तभी हम वास्तविक धर्म तक पहुँच पाएँगे एवं ज्ञान की प्राप्ति कर पाएँगे।

धर्म शब्द अपने आप में एक व्यापक रूप लिए हुए है जिसकी वास्तविक व्याख्या व्यक्ति विशेष से है न कि किसी समुदाय, कबीले, जाति, रंग, नस्ल, क्षेत्र सामाजिक व आर्थिक भेद से है। मेरा आशय धर्म के परिप्रेक्ष्य में यह है कि जब तथाकथित सनातन, ईसाई, ईस्लाम आदि धर्मों का उद्भव हुआ होगा तो उसके मूल में धर्म की यही परिभाषा थी। क्योंकि मानव प्रवृत्ति रही है जो सरल, सुलभ एवं सभी को आनन्द देने वाला होता है वही सबको प्रिय होता है। पर वही धर्म जो कल तक वास्तविक रूप में उदित तो हुआ परन्तु आगे चलकर अपना मार्ग से ही भटक जाता है। परिणामस्वरूप धर्म के नाम पर समाज में अराजकता, साम्प्रदायिकता आदि फैलती है।

जिस तरह सूर्य की पहली किरण का उदय अंधेरों को दूर तो करता है और यह मानव के लिए लाभदायक भी होता है। परन्तु इन्हीं किरणों के साथ जब विकृति–स्वरूप पराबैंगनी किरणें पृथ्वी पर आने लगती है तो हमारे स्वास्थ्य व जीवन के लिए संकट उत्पन्न कर देती हैं। परन्तु सूर्य की भाँति गुण रखने वाले धर्म में मानव की विकृत सोच के कारण विसंगतियाँ आने लगती

© 2017 IJSRSET | Volume 3, Issue 5, July-August-2017
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 753-756

है। जो मानव केन्द्रित न होकर समुदाय केन्द्रित हो जाता है। जिसमें कुछ धर्म की बातें तो आदर्श रूप में रहती है परन्तु वास्तविकता धूमिल हो चुकी होती है। जहाँ धर्म के नाम पर लोगों को मात्र ठगा जाता है।

यदि धर्म को समझना है तो इसके मर्म को समझना आवश्यक होगा। तथा साथ ही इसे आचरण की कसौटी पर कसना होगा धर्म कोई सिद्धान्त नहीं है और ना ही कोई तंत्र विद्या, मंत्र, श्लोक है जो लोग हवन या अन्य कर्मकाण्डों को धर्म कहकर सम्बोधित करते हैं और उसमें रमे रहते हैं। वे स्वयं को भ्रमित तो करते हैं साथ ही समस्त मानव चेतना को भी भ्रमित करते हैं। धर्म की गति अत्यन्त सूक्ष्म है और अपनी सूक्ष्मता के कारण अत्यन्त व्यापक भी है। धर्म एक भावदशा है। ऐसी भावदशा जिसे समस्त कर्म अनुप्रमाणिक होते हुए मानव के समस्त आचरण जिसमें उतरकर परम कल्याणकारी बन जाए, इसलिए भारतीय मनीषियों का सदैव से यह मत रहा है कि धर्म –सिद्धान्त और विश्वास से कहीं अधिक आचरण में बसता है। इसलिए समस्त मानवजाति से यह अपेक्षा की जाती है कि यदि वे अपने वास्तविक धर्म को धारण करते हैं या कोशिश भी करते हैं तो विश्व में शान्ति लाने में अधिक समय नहीं लगेगा परन्तु यहाँ हम इस बात से भी नहीं बच सकते कि जब विसंगतियाँ ही धीरे–धीरे प्रगाढ़ होकर विकट रूप धारण करती है तो धर्म की विकृतियाँ भी धीरे–धीरे ही दूर होगी।

अतः समस्त मानव जाति को अपने स्तर पर अपने अन्तस मन में धर्म को वास्तविक रूप से धारण करना होगा जो हमें विश्व शान्ति स्थापित करने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. देव नरेन्द्र– भारतीय संस्कृति
2. महाभारत, 'शान्तिपर्व'
3. 'पुरूषार्थ चतुष्टय', डॉ0 प्रेम बल्लभ त्रिपाठी
4. धर्म शास्त्र का इतिहास– P.V.काणे

© 2017 IJSRSET | Volume 3, Issue 5, July-August-2017
Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099 | Page No : 753-756

5. धर्म दर्शन की मूल समस्याएँ, पृ0सं0–09, वेद प्रकाश वर्मा, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

6. गौतम धर्मसूत्र–1/1

7. मनुस्मृति

8- गोविन्द चन्द्र पाण्डेय, भारतीय परम्परा के मूल स्वर